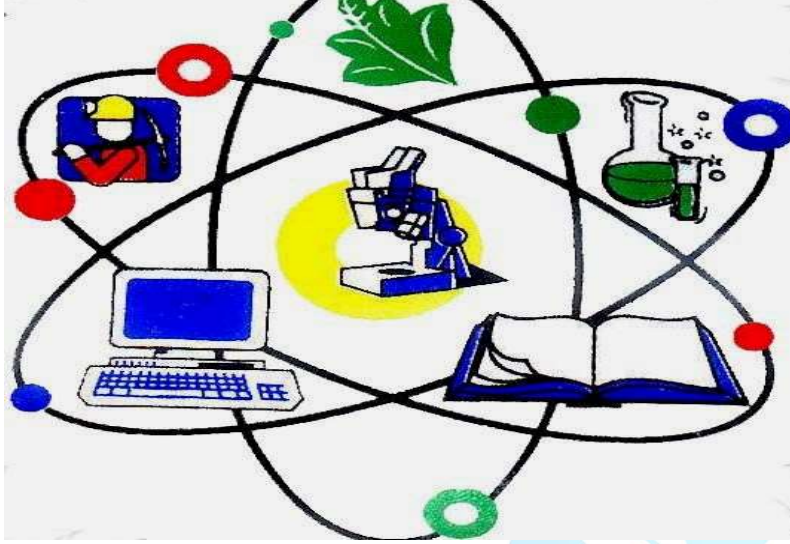


प्रस्तावित वैज्ञानिक प्राधिकरण एवं चुनौतियां



इस वर्ष के प्रारंभ में हमारे देश के विज्ञान जगत के कुछ दिग्गजों ने प्रधानमंत्री को 48 पृष्ठ की एक रिपोर्ट सौंपी है, जिसका शीर्षक “विज्ञान 2030: साइंस एण्ड टैकनॉलॉजी एज द पाइवट फॉर जॉब्स अपॉर्चुनीटीज़ एण्ड नेशनल ट्रांसफॉर्मेशन” है। इस रिपोर्ट में विज्ञान और तकनीकी प्राधिकरण जैसी एक स्वतंत्र संस्था बनाने की सिफारिश की गई है। साथ ही कहा गया है कि इस संस्था की दो समानांतर शाखाएं हो। एक ‘अन्वेषण शाखा’ हो जो किसी शोध से जुड़े विषय पर विभिन्न राज्यों एवं क्षेत्रों के विज्ञान विशेषज्ञों की सहभागिता से काम कर सके। दूसरी ‘डिलिवरी शाखा’ हो, जो उद्योगों के साथ जुड़ी रहे एवं पब्लिक-प्राइवेट साझेदारी में काम करे। विज्ञान प्राधिकरण सीधे प्रधानमंत्री को अपनी रिपोर्ट दे। फिलहाल इस संस्था का नाम स्पार्क (**SPARK: Sustainable Programme through application of Research and Knowledge**) प्रस्तावित किया गया है।

सीमाएं -

भारत में तो वैसे भी बहुत छोटी-छोटी संस्थाएं पहले से ही फैली हुई हैं, जिन्हें एक दिशा प्रदान करके बौद्धिक एवं तकनीकी मिशन की ओर आगे बढ़ाया जा सकता है। भारत सरकार के प्रिंसिपल वैज्ञानिक सलाहकार का कार्यालय ऐसी ही एक संस्था है। नीति आयोग भी भारत सरकार के लिए ऐसी ही एक सहायक संस्था है, जो राज्यों के बीच समन्वय और अनुसंधान एजेंसी के रूप में “थिंक टैंक” की तरह काम कर रहा है। हालाँकि इनके पास अनुभवी वैज्ञानिक नहीं हैं, और न ही इन्होंने भारत की विज्ञान एवं तकनीकी प्रगति में कोई योगदान दिया है। वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसंधान परिषद् के पास अपनी ही बहुत सी चुनौतियां हैं। भारत में परमाणु ऊर्जा विभाग से लेकर विज्ञान एवं तकनीकी विभाग तक के पास अपना नौकरशाही तंत्र है। यह तंत्र विज्ञान के क्षेत्र में खतरे उठाने से डरता है, क्योंकि इनमें धनशक्ति लगती है, और इन विभागों की नौकरशाही तो वित्त मंत्रालय के प्रति जवाबदेह है।

हमें ऐसी अति महत्वपूर्ण संस्था की आवश्यकता है, जो आर्थिक स्वतंत्रता के साथ वाणिज्य एवं विज्ञान का संगम कराने के लिए अपेक्षित खर्च और खतरे उठाने में सक्षम हो। ऐसा भी देखने में आता है कि विज्ञान के क्षेत्र में किसी नये विचार या नई खोज पर कुछ वर्षों तक तो बहुत जोर शोर से काम किया जाता है, लेकिन सरकार और नेतृत्व के बदलते ही वह आग ठंडी पड़ जाती है। नए नेता नई प्राथमिकताओं पर काम चाहते हैं और अनुसंधान के उस शिशु की वहीं मौत हो जाती है। अतः हमें ऐसा तंत्र चाहिए। जो अनुसंधान को किसी भी स्तर पर मरने न दे। उसमें निरंतरता बनाए रखने में सहयोगी बने।

यहाँ प्रश्न उठता है कि क्या स्पार्क ऐसी संस्था साबित हो पाएगी ? इन प्रश्नों का उत्तर इस संस्था के रचयिता ही दे सकते हैं।

‘द हिंदू’ में प्रकाशित जैकब कोश्य के लेख पर आधारित।

